CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सर्वोदय पुस्तकमाला, पुष्प-३

अतीत के पृष्ठों से

5263

लेखक
डॉ. राजाराम जैन

प्रकाशक
जैनविद्या संस्थान
दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्रीमहावीरजी
राजस्थान

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सर्वोदय पुस्तकमाला, पुष्प-३

अतीत के पृष्ठों से

5263

लेखक
डॉ. राजाराम जैन

प्रकाशक
जैनविद्या संस्थान
दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्रीमहावीरजी
राजस्थान

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

☐ प्रकाशक

जैनविद्या संस्थान
दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्रीमहावीरजी
श्रीमहावीरजी-३२२२२० (राज.)

☐ प्राप्तिस्थान

१. **जैनविद्या संस्थान, श्रीमहावीरजी**

२. **अपभ्रंश साहित्य अकादमी,**
भट्टारकजी की नशियां,
सवाई रामसिंह रोड, **जयपुर-४**

☐ प्रथम वार, ५००

☐ मूल्य ३.०० रु.

☐ मुद्रक

कुशल प्रिन्टर्स एण्ड स्टेशनर्स
शिवाजी चौक, खुर्रा ब्रह्मपुरी,
जयपुर-३०२००२, फोन-७६०५२

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रकाशकीय

इतिहास अर्थात् इति+इह+आसीत्=ऐसा हुआ था। इतिहास अतीत का चित्र ही नहीं अपितु अतीत को वर्तमान से जोड़ने का सेतु भी है।

इतिहास से हमें मानव-विकास-यात्रा की क्रमबद्ध जानकारी प्राप्त होती है और युगानुसार विभिन्न जीवन-दृष्टियों को समझने का अवसर मिलता है।

पांडुलिपियों की प्रशस्तियां, ताम्रलेख, शिलालेख, स्मारक आदि अतीत की महत्त्वपूर्ण घटनाओं को जीवन्त रखने के सर्वमान्य एवं पारम्परिक साधन माने जाते रहे हैं। उनमें वर्णित प्रेरक प्रसंग वर्तमान समस्याओं को समझने और उनके समाधान में अत्यन्त सहायक होते हैं। उन्नति का इतिहास प्रोत्साहित करता है। अवनति का इतिहास सावधान करता है। विकासोन्मुख समाज के लिए दोनों का अध्ययन लाभकारी है, आवश्यक है।

अतीत के पृष्ठों में राजनैतिक, सामाजिक, साहित्यिक व नैतिक चिन्तन-धाराएं छिपी रहती हैं। राष्ट्रीय तथा सामाजिक चरित्र के उन्नयन हेतु प्राचीन अभिलेखों व पांडुलिपि-प्रशस्तियों में से कुछ आदर्श मंगलमय जीवनवृत्त चयन कर यहां प्रस्तुत किये

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जा रहे हैं। हम आशान्वित हैं कि इनसे वर्तमान पीढ़ी को बल व प्रेरणा मिलेगी।

संस्थान की सर्वोदय पुस्तकमाला योजना के अन्तर्गत जन-सामान्य के लाभार्थ जैनधर्म एवं दर्शन से सम्बन्धित अत्यन्त सरल एवं सुरुचिपूर्ण शैली में पुस्तकें प्रकाशित की जाती हैं। प्रस्तुत पुस्तिका उसी पुस्तकमाला का तृतीय पुष्प है।

जैनदर्शन के जाने-माने विद्वान् डॉक्टर राजाराम जैन साधुवाद के पात्र हैं जिन्होंने इन इतिवृत्तों का अत्यन्त सूझबूझ से चयन किया है और सरल व सहज प्रस्तुतीकरण किया है। हम उनके आभारी हैं।

पुस्तिका के प्रकाशन में सहयोगी कार्यकर्ता एवं मुद्रणकर्ता भी धन्यवाद के पात्र हैं।

जयपुर
वीरशासन जयन्ती
श्रावण कृष्णा १, वि.नि.सं. २५१५
१६.७.८६

ज्ञानचन्द्र खिन्दूका
संयोजक
जैनविद्या संस्थान समिति

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विनम्र निवेदन

किसी भी देश के इतिहास-निर्माण के लिए जिन-जिन उपकरणों की आवश्यकता होती है, उनमें से सर्वाधिक प्रामाणिक उपकरण उस देश के प्राचीन शिलालेख, मूर्तिलेख एवं ग्रन्थ-प्रशस्तियों को माना गया है। ये उपकरण उसके गौरवमय अतीत के प्रामाणिक दस्तावेज, उसकी कला के प्रति अभिरुचि तथा सांस्कृतिक एवं चारित्रिक समुन्नति के सूचक स्वर्णिम पृष्ठ माने गए हैं। इस दृष्टि से जैन समाज के लिए यह विशेष गौरव का विषय है कि उसके आराध्यों एवं आदर्श नायकों से सम्बन्धित सहस्राधिक जैन शिलालेख, लक्षाधिक मूर्तिलेख एवं सहस्राधिक ग्रन्थ-प्रशस्तियां विभिन्न मन्दिरों एवं संग्रहालयों में सुरक्षित हैं, जो जैन समाज तथा हमारे राष्ट्र की बहुमूल्य निधि है। इनमें उपलब्ध ऐतिहासिक तथ्यों, रोचक घटनाओं एवं जीवन्त-सरस उदाहरणों के अध्ययन से बड़ी प्रेरणा मिलती है।

आज आवश्यकता इस बात की है कि उक्त विचारोत्तेजक घटनाओं को सीधी-सादी सरल भाषा में अंकित कर नवीन पीढ़ी को भी उनसे परिचित कराया जाय, जिससे उसे अपने स्वर्णिम अतीत की जानकारी मिले और अपनी पूर्व-परम्पराओं को आगे बढ़ाने की उसे प्रेरणा मिल सके। प्रस्तुत लघु पुस्तिका में ऐसा ही

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रयत्न किया गया है। इसमें कलिंगाधिपति जैन सम्राट् खारवेल से लेकर दक्षिण भारतीय शिलालेखों तथा मध्यकालीन कुछ प्रमुख जैन ग्रन्थ-प्रशस्तियों में उल्लिखित तपःपूत साधु-साध्वियों, आचार्यों, श्रावक-श्राविकाओं, राजाओं, मन्त्रियों श्रेष्ठियों तथा कवि-लेखकों से सम्बन्धित रोचक इतिवृत्तों एवं आदर्श कार्य-कलापों का अंकन किया गया है। हमें विश्वास है कि हमारा यह प्रयत्न सहृदय पाठकों के लिए रुचिकर लगेगा।

अन्त में प्रबन्धकारिणी कमेटी दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्रीमहावीरजी के प्रति अपना आभार व्यक्त करता हूँ जिन्होंने इसके प्रकाशन की व्यवस्था कर हमारे उत्साह को बढ़ाया है।

डॉ. राजाराम जैन
(आरा, बिहार)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अतीत के पृष्ठों से

जैन-समाज का संगठन चतुर्विधसंघीय व्यवस्था के आधार पर किया गया है। भगवान् महावीर ने आज से लगभग ढाई हजार वर्ष पूर्व अपनी दिव्य शक्ति से इस तथ्य का पूर्ण अनुभव कर उक्त पद्धति पर ही उसका गठन श्रेयस्कर समझा था और साधु-साध्वी एवं श्रावक-श्राविका इन चार को चतुर्विध-संघ के अन्तर्गत रखा था। तभी से हमारे यहां यह परम्परा चली आ रही है।

समाज की आध्यात्मिक, धार्मिक, दार्शनिक, सांस्कृतिक एवं साहित्यिक प्रगति में साधु एवं साध्वियों की जितनी महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है, श्रावक एवं श्राविकाओं की भूमिका उससे कम महत्त्वपूर्ण नहीं होती। साधु एवं साध्वियों का दायित्व जहां शास्त्रोक्त विधि से धर्माचरण, गम्भीर-चिन्तन, विशेष अवसरों पर समाज-सम्बोधन एवं लेखन-सम्बन्धी है, वहीं पर श्रावक-श्राविकाओं का दायित्व शास्त्र-सम्मत सदाचरण, साधु-साध्वियों तथा उनके अनुयायियों के लिए साधन-सामग्री का दान, उनके संरक्षण की सुव्यवस्था एवं उनके विचारों का प्रचार-प्रसार तथा विद्वानों का सम्मानादि करना है। तात्पर्य यह है कि दोनों का अविनाभावी सम्बन्ध है। आज जैन समाज यद्यपि अल्पसंख्यक है किन्तु चारित्रिक, वैचारिक एवं अनुशासन की दृष्टि से भारत में उसका जो महत्त्वपूर्ण स्थान बन सका है, उसमें उक्त पद्धति ही उसका मूल कारण है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हमारे निबन्ध की विषय-सीमा उक्त चतुर्विध संघ के ऐसे कुछ श्रावक-श्राविकाओं तक सीमित है जिनके नामों एवं कार्यों के उल्लेख कुछ प्राचीन जैनअभिलेखों एवं जैन ग्रन्थ-प्रशस्तियों में उपलब्ध होते हैं और जिन्होंने कला, संस्कृति, इतिहास, साहित्य, समाज एवं राष्ट्र के नव-निर्माण में अभूतपूर्व योगदान किए हैं। अभिलेख उत्कीर्ण करानेवालों एवं ग्रन्थ-प्रशस्तिकारों ने बड़ी रोचक एवं मार्मिक भाषा-शैली में उनका स्मरण किया है। उनमें से कुछ का संक्षिप्त परिचय यहां प्रस्तुत किया जा रहा है।

सर्वप्रथम जैन मन्दिरों, मठों, कीर्तिस्तम्भों एवं अन्य सार्वजनिक स्थानों में उपलब्ध जैन अभिलेखों में उल्लिखित ऐसे पुरुषों एवं महिलाओं का परिचय प्रस्तुत किया जा रहा है जिन्होंने अपने बल-वीर्य, पुरुषार्थ-पराक्रम, न्यायोचित सम्पत्ति-अर्जन एवं उसका दान तथा अपने बुद्धिकौशल से महावीर के मार्ग को धवलित रखा।

१. **महामेघवाहन ऐलखारवेल**—ऐसे सत्पुरुषों में हम सर्वप्रथम कलिंगनरेश महामेघवाहन ऐलखारवेल का स्मरण करते हैं जिसने ईसा पूर्व दूसरी सदी के आस-पास अपने अजेय पौरुष से कलिंग को भारत का एक शक्तिशाली साम्राज्य बनाया था। उसका एक शिलालेख भुवनेश्वर के पास उदयगिरि-खण्डगिरि की पहाड़ी पर मिला है, जो १७ पंक्तियों का है। उसमें उसने अपने राज्यकाल का पूरा इतिवृत्त प्रस्तुत किया है। इसकी लिपि ब्राह्मी एवं भाषा मिश्रित शौरसेनी प्राकृत है। उसमें उसने अपने द्वारा किए गए तूफानी युद्धों एवं सफल विजयों की चर्चा तो की है साथ ही यह भी लिखा है— मैंने जैन-धर्म एवं जैन-साहित्य की उन्नति हेतु अनेक कार्य किए हैं। पूर्वकाल में नन्दराज द्वारा अपहृत कलिंगजिन की

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्राचीन मूर्ति भी वापस लेली है । यह कलिंगजिन भगवान् ऋषभदेव की मूर्ति थी जो खारवेल के पूर्वकाल से ही कलिंग की राष्ट्रीयमूर्ति के रूप में पूजित थी। मगध के नन्द-नरेश उसे छीनकर पाटलीपुत्र ले आये थे।

शिलालेख के अन्त में खारवेल ने लिखा है—मैंने कुमारी पर्वत पर अर्हन्तों की अनेक निषीधिकाएं एवं तपोधनमुनियों के लिए अनेक गुफाएं बनवाई हैं। इसी प्रसंग में मैंने स्वयं उपासक अर्थात् श्रावक-व्रतधारण किए हैं । वह फिर आगे लिखता है— मैंने विशाल जिनमन्दिर के पास एक भव्य सभामण्डप तथा उसके मध्य में उत्तुंग मानस्तम्भ का भी निर्माण कराया है। इसी सभा-मण्डप में तपस्वी, ज्ञानश्रमण मुनियों का एक सम्मेलन बुलवाया है जिसमें चारों ओर के दूर-दूर से श्रमण महामुनिगण पधारे थे। इस सम्मेलन में राजर्षि खारवेल ने भगवान् महावीर की दिव्यध्वनि में उच्चरित उस कल्याणकारी द्वादशांगश्रुत का पाठ कराया था जो कि वीर निर्वाण संवत् १६५ अर्थात् ई. पू. ३६२ (श्रुतकेवली भद्रबाहु का निर्वाणकाल) से क्रमशः धूमिल होता जा रहा था। खारवेल ने उसके उद्धार का पूर्ण प्रयत्न किया था।

खारवेल जिनेन्द्रभक्त श्रावक-शिरोमणि होते हुए भी एक महान् सर्वधर्मसहिष्णु नृपति था। उसके राष्ट्रीय भावना से ओतप्रोत एवं पराक्रमी होने का सर्वश्रेष्ठ उदाहरण यह है कि भारत-भूमि पर विदेशी प्रभाव को भयानक भविष्य की भूमिका मानकर उसने आतंककारी यूनानी आक्रामक नरेश दिमित्र को मथुरा तथा सम्भवतः उससे भी आगे उत्तरी-पश्चिमी सीमान्त से बुरी तरह खदेड़ दिया था।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इस प्रकार खारवेल-शिलालेख अथवा उदयगिरि-खण्डगिरि-शिलालेख (भुवनेश्वर-उड़ीसा) जैन इतिहास एवं संस्कृति की अमूल्य निधि तो है ही, भारतीय इतिहास के अनेक प्रच्छन्न अथवा अस्पष्ट तथ्यों की भी एक सफल कुंजी है। इसीलिए इतिहासकार राखलदास बनर्जी ने लिखा है कि यह लेख पौराणिक वंशावलियों की पुष्टि करता है और ऐतिहासिक कालगणना को लगभग ५वीं शती ई.पू. के मध्य तक पहुँचा देता है। 'भारतवर्ष' के नाम का सर्वप्रथम उल्लेख इसी शिलालेख में मिलता है।

२. **गंगराज अविनीत**—नोनमंगल, हसकोटे एवं मर्करा के ताम्रपत्र-लेखों तथा अन्य शिलालेखों के अनुसार गंगराज अविनीत ने अनेक जैनमन्दिरों, स्वाध्यायशालाओं एवं दानशालाओं का निर्माण कराया था। इस श्रावक-राजा की जिनेन्द्र-भक्ति का परिचय इसी से मिल जाता है कि उसने अपनी बाल्यावस्था में एक तीर्थङ्कर-मूर्ति को अपने मस्तक पर विराजमान कर भयानक बाढ़ में कावेरी नदी को अकेले ही पार कर लिया था।

राजगद्दी पर बैठने के बाद उसने ४६६ ईस्वी के आसपास अपने पुत्र राजकुमार दुर्विनीत में जैनधर्म के संस्कार डालने हेतु सर्वार्थसिद्धि के प्रणेता आचार्य देवनन्दि पूज्यपाद (५२१-५८१ वि. सं.) से शिक्षा दिलवाई थी। राजकुमार दुर्विनीत ने अपने राज्याभिषेक के बाद अपनी राजधानी तलकाड में एक जैन विद्यापीठ की स्थापना की थी जिसमें जैनधर्म के साथ-साथ आचार, दर्शन, छन्द, व्याकरण, आयुर्वेद, काव्य, साहित्य एवं राजनीति आदि विषयों की सैद्धान्तिक तथा प्रायोगिक शिक्षा प्रदान की जाती थी।

३. **चामुण्डराय**—श्रवणबेलगुल के शिलालेख संख्या ३७ में

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

एक प्रश्न पूछा गया है—जिनशासन का स्थिररूप से उद्धार करनेवाला प्रथम श्रावक कौन है ? उसी प्रश्नकर्ता ने उत्तर देते हुए कहा है—जिनशासन का स्थिररूप से उद्धार करनेवाला सर्वप्रथम श्रावक राचमल्ल भूपति का श्रेष्ठ मन्त्री चामुण्डराय है। इस श्रावक-शिरोमणि तथा 'चामुण्डराय-पुराण' के लेखक चामुण्डराय को कौन नहीं जानता? वे अत्यन्त वीर और विद्वान् थे। सरस्वती उनकी जिह्वा एवं लेखनी में स्वयं उपस्थित रहती थी। शिलालेख संख्या २३४ (वि.सं. ११८०) के अनुसार चामुण्डराय ने पोदनपुर के समीप ५२५ धनुष ऊँची बाहुबली की मूर्ति के दर्शन के लिए जब प्रस्थान करना चाहा तब उनके गुरु (सिद्धान्त चक्रवर्ती नेमिचन्द्राचार्य) ने उस स्थान को अगम्य बताकर उन्हें रोक दिया। इस पर चामुण्डराय ने उसी प्रकार की श्रेष्ठ, सौन्दर्यपूर्ण एवं उत्तुंग मूर्ति के निर्माण कराने का संकल्प किया और उसे पूर्ण करके ही छोड़ा। उक्त लेख में बताया गया है 'मूर्ति जब बहुत विशाल होती है तब उसमें सौन्दर्य प्रायः नहीं आ पाता। यदि विशाल मूर्ति में सौन्दर्य आ भी गया, तो उसमें दैवी-चमत्कार का अभाव हो सकता है। किन्तु उक्त तीनों तत्त्वों के मिश्रण से इस गौमटेश्वर की मूर्ति की छटा अपूर्व हो गई है।' बाहुबली की यह मूर्ति ५७ फीट ऊँची है। कर्नाटक में स्थित बाहुबली का यह स्थल श्रवणबेलगुल के नाम से प्रसिद्ध है। इस ऐतिहासिक मूर्ति द्वारा वीरवर चामुण्डराय की कीर्ति 'यावच्चन्द्र दिवाकरौ' विद्यमान रहेगी।

४. **अमोघवर्ष**—राष्ट्रकूटवंशी जैन सम्राट् अमोघवर्ष के शासन की प्रशंसा विदेशी इतिहासकारों ने भी की है। १९ वीं सदी के अरबी इतिहासकार सुलेमान के अनुसार—"उस समय ससार में केवल चार सम्राट् ही प्रसिद्ध थे—१. भारत का सम्राट् अमोघवर्ष,

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

२. चीन का सम्राट्, ३. बगदाद का खलीफा एवं ४. रूम (तुर्की) का सुलतान। किन्तु इन चार में भी सम्राट् अमोघवर्ष प्रथम थे।" डॉ. भण्डारकर के मतानुसार– "राष्ट्रकूट नरेशों में अमोघवर्ष जैन-धर्म का सर्वमहान् संरक्षक था।" पट्टावलियों के अनुसार वीरसेन स्वामी के पट्टशिष्य और वाटनगर केन्द्र के तत्कालीन अधिष्ठाता आचार्य जिनसेन स्वामी उक्त अमोघवर्ष के धर्मगुरु एवं राजगुरु थे। जिनसेन ने अपने गुरु वीरसेन स्वामी के स्वर्गारोहण के बाद उनके अधूरे कार्यों को वि. सं. ८१४ के आसपास अमोघवर्ष के राज्यकाल में ही पूर्ण किए थे जिसमें ६०,००० श्लोक-प्रमाण 'जयधवल' ग्रन्थ प्रमुख है। अमोघवर्ष की ही प्रार्थना पर पार्श्वाभ्युदय-महाकाव्य एवं महापुराण की भी रचनाएँ की गईं।

अमोघवर्ष को जैन-समाज का वीर-विक्रमादित्य माना जा सकता है क्योंकि उसका दरबार अनेक साहित्यिक आचार्यों से भरा हुआ रहता था। आचार्य जिनसेन, गुणभद्र, आयुर्वेद के महान् आचार्य उग्रादित्य, महान् गणितज्ञ महावीराचार्य, महान् वैयाकरण शाकटायन पाल्यकीर्ति आदि इनमें प्रमुख थे। इतना ही नहीं, इन आचार्यों के संसर्ग में रहकर अमोघवर्ष में भी काव्य-प्रतिभा का स्फुरण हुआ और उसने 'कविराजमार्ग' नामक छन्द एवं अलंकार शास्त्र तथा 'प्रश्नोत्तररत्नमालिका' नामक नीतिशास्त्र का प्रणयन किया। इसकी ग्रन्थ-प्रशस्ति में अमोघवर्ष ने स्वयं लिखा है–विवेक का उदय होने पर राजर्षि अमोघवर्ष ने राज्य का परित्याग कर दिया और सुधीजनों को विभूषित करनेवाली इस 'रत्नमालिका' का प्रणयन किया।

५. सेनापति गंगराज–दक्षिण भारत के अनेक शिलालेखों में सेनापति गंगराज के कार्यों की चर्चा आई है। उनके अनुसार एक

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

और उसने अनेक युद्धों में शत्रुओं के छक्के छुड़ा दिये तो दूसरी ओर वह जिनवाणी एवं जैनधर्म की भक्ति में भी पीछे न रहा। उसके पुत्र बोप्प सेनापति ने दोरसमुद्र में एक जिनालय बनवाकर पार्श्वनाथ की मूर्ति स्थापित की थी। उसके अनुसार अनेक उपाधियों से विभूषित गंगराज ने अगणित ध्वस्त जैन मन्दिरों का जीर्णोद्धार कराया था। गंगराज के मत से पृथिवी के सात नरक इस प्रकार हैं– १. झूठ बोलना, २. युद्ध में भय दिखाना, ३. परदारारत होना, ४. शरणार्थियों को शरण न देना, ५. अधीनस्थों को अपरितृप्त रखना, ६. जिन्हें पास में रखना चाहिए, उन्हें छोड़ देना एवं ७. स्वामी से द्रोह करना।

६. **सामन्त कक्कुक**— जोधपुर जिले के घटियाल ग्राम जिसका दूसरा नाम रोहिन्सकूप भी था, के जैन मन्दिर में वि. सं. ९१८ का एक शिलालेख मिला है। मन्दिर एवं शिलालेख का निर्माण प्रतिहारवंशी जैन सामन्त कक्कुक ने कराया था। वह प्रकृति से अत्यन्त दयालु एवं प्रजावत्सल था किन्तु शत्रुओं के लिए महाकाल के समान था। उक्त शिलालेख के अनुसार उसने प्रजाजनों की भलाई के लिए रोहिन्सकूप में सार्वजनिक बाजार का निर्माण कराया था।

बाजार-निर्माण आज के सन्दर्भ में भले ही सामान्यकार्य हो किन्तु कक्कुक के काल में राजनैतिक अस्थिरता के कारण जान-माल की सुरक्षा अत्यन्त कठिन रहती थी। बाजार के बिना जनता की अनेक कठिनाईयों का अनुभव करके ही वीर कक्कुक ने उसका निर्माण तथा उसकी सुरक्षा की पूर्ण व्यवस्था कर बड़े साहस का कार्य किया था।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

घटियाल का उक्त शिलालेख इस कारण भी महत्त्वपूर्ण है कि उसमें प्रतिहारवंश की उत्पत्ति एवं उसके राजवंश की परम्परा का विवरण भी प्राप्त होता है।

७. महासती अत्तिमव्वे— महासती श्राविका अत्तिमव्वे महिला-समाज के गौरव की प्रतीक है। १२ वीं सदी के प्रारम्भ में लिखित शिलालेखों के अनुसार यह वीरांगना कल्याणी साम्राज्य के उत्तरवर्ती चालुक्य-नरेश तैलपदेव आहवमल्ल के प्रधान सेनापति मल्लप की पुत्री तथा महादण्डनायक वीर नागदेव की पत्नी थी। उसके शील, सदाचार, पातिव्रत्य एवं वैदुष्य के कारण स्वयं सम्राट् भी उसके प्रति पूज्य बुद्धि रखता था।

एक बार की घटना है कि परमार नरेश वाक्पतिराज मुंज ने तैलप नरेश पर आक्रमण कर दिया। महादण्डनायक नागदेव अपने सम्राट्, महामन्त्री, प्रधान सेनापति एवं अपनी पत्नी अत्तिमव्वे को गोदावरी नदी के इस पार शिविर में ही छोड़कर स्वयं सेना की टुकड़ी के साथ परमारों को खदेड़ते हुए गोदावरी के उस पार चले गए। संयोग से वे युद्ध में घायल हो गए। इसी बीच भयानक आंधी एवं तूफान के साथ गोदावरी में प्रलयंकारी बाढ़ आ गई। अब तो सम्राट्, महामन्त्री एवं अन्य शिविरवासी सभी लोग बड़े चिन्तित हो उठे कि वीर नागदेव तथा उसकी सेना को कैसे वापस लाया जाय ? प्रकृति के भयंकर प्रकोप के सम्मुख सभी विवश थे।

इस घोर व्याकुल-वातावरण के बीच लोगों ने देखा कि उनके सम्मुख शिविर के एक एकान्त कक्ष से अत्यन्त तेजस्विनी मूर्ति वेगपूर्वक सम्राट् की ओर चली आ रही है। उसने आकर

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सभी हितैषियों को प्रणाम किया और स्फूर्ति के साथ एक ऊँचे टीले पर चढ़कर गोदावरी नदी के सम्मुख खड़ी हो गई। लोग उससे कुछ बोलना चाह रहे थे किन्तु किसी के भी मुख से कोई शब्द नहीं निकल रहा था। उसका मुखमण्डल ग्रीष्मकालीन दोपहर के प्रखर सूर्य के समान तेजोदीप्त तथा उसके शरीर से तप्त स्वर्ण के समान अलौकिक कान्ति झांक रही थी। उस मूर्ति का नाम अत्तिमव्वे था। उसने रौद्ररूपा गोदावरी नदी पर एक तीक्ष्ण दृष्टि डाली। फिर नदी के उस पार खड़े हुए अपने प्रियतम नागदेव तथा उनकी सैन्य टुकड़ी के ऊपर एक दृष्टि डाली और पंचनमस्कार मन्त्र का उच्चारण एवं जिनेन्द्रदेव का स्मरण कर गम्भीरवाणी में बोली—'यदि मेरी जिनेन्द्र-भक्ति अडिग है, मेरा पातिव्रत्यधर्म अखण्ड है और यदि मेरी सत्यनिष्ठा अकम्प है तो हे गोदावरी नदी, मैं तुझे आदेश देती हूँ कि तेरा यह रौद्र-प्रवाह उतने समय तक के लिए रुक जाय जब तक कि हमारे प्रियतम अपने सैन्य-समुदाय के साथ उस पार से इस पार वापस न लौट आयें।' गोदावरी के आर-पार खड़े लोगों ने देखा कि सचमुच ही उस महासती का आदेश गोदावरी ने मान लिया। उसका उग्ररूप शान्त हो गया। उसका पति नागदेव अपने सैनिकों के साथ इस पार लौट आया। उसके तत्काल बाद ही गोदावरी ने फिर वही अपना रौद्ररूप धारण कर लिया।

युद्ध में आहत हो जाने के कारण नागदेव का कुछ समय के बाद ही स्वर्गवास हो गया और अत्तिमव्वे वैधव्य का जीवन व्यतीत करने लगी। किन्तु उस अवस्था में भी उसने अनेक महत्त्वपूर्ण कार्य किए। स्वर्ण, हीरा तथा माणिक्य की १५०० मूर्तियाँ बनवाकर उसने विभिन्न जिनालयों में प्रतिष्ठित कराईं. चतुर्विध दानशालाएँ खुलवाईं तथा उभयभाषा चक्रवर्ती महाकवि

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पोन्न के शान्तिपुराण की १००० प्रतिलिपियाँ कराकर विविध शास्त्र-भण्डारों में वितरित कराई।

होयसल नरेश के सेनापपि गंगराज ने एक बार महासती अत्तिमव्वे द्वारा इस प्रकार नदी प्रवाह को शान्त करने का उदाहरण देकर कावेरी नदी के उग्र प्रवाह को शान्त किया था। वि. सं. ११७५ के एक शिलालेख में इसका उल्लेख मिलता है। 'होयसल नरेश के महापराक्रमी सेनापति गंगराज ने अत्तिमव्वे द्वारा गोदावरी-प्रवाह को स्थिर कर देने की साक्षी देकर ही उमड़ती हुई कावेरी नदी को शान्त किया था। समस्त विश्व इस महान् जिनेन्द्रभक्ता अत्तिमव्वे की इसीलिए प्रशंसा करता है कि उसके आदेश देते ही उसके तेजोप्रभाव से गोदावरी नदी का प्रवाह तक रुक गया था।'

८. **जक्कियव्वे**—१२ वीं सदी के आसपास उत्कीर्ण कराए गए एक शिलालेख (सं. १४०) में जक्कियव्वे नाम की एक ऐसी वीरांगना के कार्यों का वर्णन है जिसे राष्ट्रकूटनरेश कृष्ण तृतीय के शासनकाल में उसके पति सत्तरस नागार्जुन के स्वर्गवास पर नागरखण्ड की शासिका नियुक्त किया गया था। वह प्रजाशासन के समान ही जैनशासन में भी बड़ी कुशल थी। किसी असाध्य बीमारी से ग्रस्त होने पर उसने अपनी पुत्री को शासन का भार सौंपकर समाधिमरणपूर्वक शरीर का त्याग किया।

९. **पाम्बव्वे**—कडूर-दुर्ग के मुख्य प्रवेश-द्वार के स्तम्भ पर १० वीं सदी की एक राजमहिषी पाम्बव्वे का उल्लेख हुआ है। जिसने अपना केशलोंच करके आर्यिकाव्रत की दीक्षा ली और बीस वर्षों तक कठोर तपश्चर्या की। समाधिमरण के पूर्व उसने

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अपने पुत्रों व राजकुमारों से कहा था–'जो कुछ कभी मैंने प्राप्त किया अथवा कहीं से मेरे पास जो कुछ भी आया, उस समस्त परिग्रह का मैंने मन, वचन एवं काय से इस प्रकार त्याग कर दिया है जैसे मैंने उसे कभी प्राप्त ही न किया हो।'

किसी राजकुल में जन्मी, पली व बड़ी हुई नारी का इस प्रकार का आचरण और कठोर तपस्या एक अनुपम उदाहरण है।

१०. **पम्पादेवी**—हुम्मच के १२ वीं सदी के एक शिलालेख में विदुषी पम्पादेवी का आदरपूर्वक उल्लेख किया गया है। तदनुसार वह गंगनरेश तैल तृतीय की पुत्री थी। उसके द्वारा निर्मापित एवं चित्रित चैत्यालयों के शिखरों से पृथिवी भर गई थी। उसके द्वारा मनाए गए जिन-धर्मोत्सवों के तूर्यों एवं भेरी-नादों से दिग्-दिगन्त व्याप्त हो गए थे तथा जिनेन्द्र की ध्वजाओं से आकाश भर गया था। आदिनाथ चरित्रश्रवण ही उस पम्पादेवी के कर्णफूल, चतुर्विध-दान ही हस्त-ककण तथा जिन-स्तवन ही उसका कण्ठहार था। इस पुण्यचरित्रा देवी ने उव्वितिलक-जिनालय का निर्माण परम्परा के अनुसार छने हुए पानी से केवल एक मास के भीतर निर्मित कराकर प्रतिष्ठित कराया था।

पम्पादेवी स्वयं पंडिता थी। उसने 'अष्टविद्यार्चन महाभिषेक' एवं 'चतुर्भक्ति' नामक दो ग्रन्थों की रचना भी की थी।

उक्त सामग्री तो जैन अभिलेखों के आधार पर प्रस्तुत की गई है। अब प्राचीन जैन ग्रन्थ-प्रशस्तियों में उल्लिखित कुछ श्रावकों के कार्य-कलापों के इतिवृत्त प्रस्तुत हैं—

११. **महामन्त्री भरत**—महाकवि पुष्पदन्त कृत महापुराण,

5263
Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जसहरचरिउ एवं णायकुमारचरिउ की प्रशस्तियों से विदित होता है कि महाकवि पुष्पदन्त इन ग्रन्थों का प्रणयन कभी न कर पाते यदि राष्ट्रकूट नरेश कृष्णराज तृतीय के महामन्त्री भरत ने उन्हें ससम्मान प्रश्रय एवं प्रेरणा न दी होती। महाकवि पुष्पदन्त अत्यन्त स्वाभिमानी, अक्खड़ एवं फक्कड़ लेखक थे। जन्म से वे ब्राह्मण थे। जब जैनधर्म ने उन्हें आकर्षित किया तब वे पक्के जैन बन गए। प्रखर प्रतिभा उन्हें पूर्वसंस्कारों से प्राप्त थी ही। सम्भवतः किसी राजदरबार में अथवा किसी अहंकारी सेठ ने अहंकारवश उनका अपमान कर दिया, बस उन्होंने क्रोधित होकर अपनी गृहस्थी समेटी एक थैले में और चल दिए अज्ञात दिशा में।

कई दिनों के बाद एक दूसरे राज्य में पहुँचकर वे एक निर्जन जंगल में हाथ का तकिया लगाए एक वृक्ष के नीचे लेटे थे। उस समय वहाँ से दो यात्री निकले और उनकी चिन्तित मुद्रा देखकर पूछा—हे भाई, तुम इस निर्जन एकान्त वन में क्यों पड़े हो? पास के नगर में क्यों नहीं चले जाते? पुष्पदन्त ने उत्तर दिया—गिरि-कन्दराओं में घास खाकर रह जाना अच्छा किन्तु दुर्जनों की टेढ़ी भौंहें सहकर पकवान खाना भी अच्छा नहीं।

भला ऐसा अक्खड़ एव अभिमानमेरु महाकवि किसके वश में होता? उसे अपने भवन में रखकर कौन आग से खेलता? किन्तु धन्य हैं वे महाश्रावक महामात्य भरत जो महाकवि को साहित्यिक महाविभूति मानकर अपने राज्य में किसी प्रकार मना करके ले गये। प्रारम्भ में तो वे बड़े भयभीत थे कि कहीं कवि महोदय किसी कारणवश रूठकर भाग न जायं। किन्तु भरत की शालीनता, विनम्रता, उदारता एवं साहित्य-रसिकता ने कवि को इतना अधिक प्रभावित किया कि वह वहीं रम गया और अपने ग्रन्थों का प्रणयन कर उनकी प्रशस्तियों में इस प्रकार लिखा—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

"पुष्पदन्त के साथ ही मित्रता हो जाने से भरत का राज-महल विद्या-विनोद का स्थान बन गया। उस महल में पाठक लोग निरन्तर पढ़ते रहते हैं, गायक गाते रहते हैं तथा लेखकगण सुन्दर-सुन्दर काव्य लिखते रहते हैं।

....महाकवि भरत समस्त कलाओं और विद्याओं में कुशल हैं। प्राकृत-कवियों की रचनाओं पर मुग्ध रहते हैं। उन्होंने सरस्वती-सुरभि का दूध पिया है, लक्ष्मी उन्हें चाहती है। वे सत्यप्रतिज्ञ निर्मत्सर हैं। युद्धों का बोझ ढोते उनके कन्धे घिस गये हैं।"

सचमुच ही महाकवि को प्रश्रय देकर और प्रेमपूर्वक अनुरोध कर भरत ने वह कार्य किया जिससे जैन-साहित्य के मौलिक ग्रन्थों का प्रणयन तो हुआ ही, साथ ही भरत की कीर्ति भी चिरस्थायी हो गई।

१२. **महामात्य नन्न**— भरत की मृत्यु के बाद उसके पुत्र महामात्य नन्न ने भी उक्त कवि को अपने राजभवन में सम्मान दिया। उसकी चर्चा करते हुए कवि ने लिखा है—

"जिस नन्न ने बड़े भारी दुष्काल के समय, जब कि सारा जनपद नीरस और वीरान हो गया था, दुस्सह दुःख सर्वत्र व्याप्त हो रहा था, स्थान-स्थान पर मनुष्यों की खोपड़ियाँ एवं कंकाल बिखरे पड़े थे, सर्वत्र रंक ही रंक दिखाई पड़ रहे थे, यथाशक्ति सभी की सहायता कर मुझे भी सरस-भोजन, सुन्दर वस्त्र एवं ताम्बूलादि से सदा सम्मानित किया, वह नन्न चिरायु हो।"

महाकवि पुष्पदन्त ने अपनी एक रचना-प्रशस्ति में सरस्वती को चुनौती देते हुए कहा है— "हे सरस्वति, तुम मुझे छोड़कर

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जाओगी कहाँ ? मेरी जिह्वा पर बैठकर तुम्हें जो सुख-सम्मान मिलता है, क्या वह तुम्हें अन्यत्र कहीं मिल सकेगा ?" कवि के समग्र साहित्य की प्रौढता को तथा उक्त उक्ति को देखकर कवि द्वारा प्रयुक्त उसकी काव्यपिशाच, अभिमानमेरु तथा अभिमानचिह्न जैसी उपाधियां सार्थक सिद्ध होती हैं।

१३. **श्रावक शिरोमणि जगडूशाह**— 'पुरातन प्रबन्ध संग्रह' के एक उल्लेख के अनुसार वि. सं. १३१४ में गुजरात में एकबार भयानक अकाल पड़ा। सर्वत्र त्राहि-त्राहि मची हुई थी। उस समय श्रावक-शिरोमणि जगडूशाह ने अपने पुरुषार्थ से अर्जित सम्पत्ति को सुरक्षित रखना घोर पाप समझा। अतः उन्होंने अकाल-पीड़ितों की सहायता के लिए ८००० मूड (स्वर्णमुद्रा विशेष) राजा बीसलदेव को, १५,००० मूड राव हम्मीर को, तथा २१००० मूड सुलतान को भेंट स्वरूप प्रदान कर दिए।

१४. **साहू नट्टल**—साहू नट्टल (१२ वीं सदी) दिल्ली के अत्यन्त समृद्ध व्यापारियों एवं जिनवाणी-भक्तों में अग्रगण्य थे। दिल्ली के तोमरवंशी राजा अनंगपाल के वे परम विश्वास-पात्र थे। उनका व्यापार अंग, बंग, कलिंग, गौड़, केरल, कर्नाट, द्रविड़, पांचाल, सिन्धु, खास, मालवा, लाट, भोट, टक्क, नेपाल, कोंकण, महाराष्ट्र, भादानक, हरियाणा, मगध, गुजरात, सौराष्ट्र आदि देशों में फैला हुआ था। हरयाणा निवासी जैनकवि विबुध श्रीधर जब दिल्ली में आकर राजा अनंगपाल के मन्त्री अल्हण साहू से मिलता है, तब वह सलाह देता है कि वह नगर सेठ नट्टल साहू से अवश्य मिले। किन्तु अपरिचित होने के कारण वह कवि उनसे नहीं मिलना चाहता और अपने पिछले अनुभवों को सुनाता हुआ वह अल्हण साहू से कहता है—हे साहू, आपने मुझसे जो कुछ

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कहा है वह ठीक है किन्तु दुर्जनों की कमी कहीं भी नहीं है। वे कूट-कपट को ही विद्वत्ता मानते हैं। वे सज्जनों से ईर्ष्या एवं विद्वेष करते हैं तथा उनके सद्गुणों को असह्य मानकर उनके प्रति दुर्व्यवहार करते हैं। कभी मारते हैं, कभी टेढ़ी आंखें दिखाते हैं और कभी हाथ-पैर अथवा सिर तोड़ देते हैं। मैं ठहरा सीधा-सादा, सरल स्वभावी, अतः मैं अब किसी के पास नहीं जाना चाहता। कवि का यह कथन सुनकर अल्हण को कवि की स्थिति पर बड़ा दुःख होता है। वह कहता है—'हे कवि, क्या सचमुच ही तुम नट्टल को नहीं जानते ? अरे, वह धर्म-कार्यों में बड़ा ही धुरन्धर है। वह दुर्जनों को कुछ भी नहीं समझता, सज्जनों को सिरमौर मानता है। जो जिन-भगवान् का पूजा-विधान कराता है, विद्वद्-गोष्ठियों का उत्तम आयोजन कराता है और कवियों का सम्मान करता है, उस नट्टल के पास आप अवश्य जाइये।'

साहू अल्हण के अनुरोध पर विबुध श्रीधर नट्टल साहू के पास पहुँचे। उसके भव्य व्यक्तित्व को देखते ही कवि बड़ा प्रभावित हुआ। नट्टल भी कवि को देखते ही आसन छोड़कर खड़ा हो गया और ताम्बूलादि से उसका स्वागत किया। उस समय का दृश्य इतना भव्य था कि दोनों के मन में एक साथ ही यह भावना उदित हो रही थी—'हमने पूर्वभव में ऐसा कोई सुकृत अवश्य किया था जिसका फल हमें साक्षात् मिल रहा है।' एक क्षण के बाद कवि ने नट्टल साहू से कहा— 'मैं अल्हण साहू के अनुरोध से आपके पास आया हूँ। उन्होंने आपका परिचय मुझे दे दिया है। आपने योगिनीपुर में आदिनाथ का एक विशाल जिन-मन्दिर बनवाया है तथा उस पर जैन ध्वजा को फहराया है। आपने जिस प्रकार उस भव्य मन्दिर की प्रतिष्ठा कराई है उसी प्रकार आप एक 'पार्श्वनाथचरित' की रचना भी कराईये।'

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कवि का यह कथन सुनकर नट्टल साहू अत्यन्त प्रमुदित हुआ और बोला— 'हे कविवर, सुखकारी रसायन का एक कण भी क्या कृशकायवाले प्राणी के लिए बड़ा भारी अवलम्बन नहीं होता?' तब कवि ने उसके आश्रय में रहकर अपभ्रंश भाषा में महाकाव्यात्मक शैली में 'पार्श्वनाथचरित' की रचना की।

१५. कमलसिंह—१५ वीं सदी के महाकवि रइधू ने अपनी अनेक ग्रन्थ-प्रशस्तियों में अपने आश्रयदाता श्रावकों एवं श्राविकाओं का मनोहारी वर्णन किया है। ऐसे सज्जनों में से एक थे कमलसिंह संघवी, जो गोपाचल के तोमरवंशी राजा डूंगरसिंह के मन्त्री थे। अपने ऐश्वर्य में वे स्वयं किसी राजा-महाराजा से कम न थे। अग्रवाल कुल में जन्मे, गोयलगोत्री कमलसिंह जैनधर्म के परमभक्त थे और नियमित रूप से स्वाध्याय करते थे। एक दिन वे कवि रइधू से कहते हैं—'हे कविवर! शयनासन, हाथी, घोड़े, ध्वजा, छत्र-चमर, सुन्दर सन्तान, पुत्र, भाई आदि सभी मुझे उपलब्ध हैं। सौभाग्य से किसी भी प्रकार की भौतिक-सांसारिक सुख-सामग्री की कमी नहीं किन्तु इतना सब होने पर भी मुझे एक वस्तु का अभाव सदा खटकता रहता है और वह यह कि मेरे पास काव्यरूपी एक भी सुन्दर मणि नहीं है। उसके बिना मेरा सारा ऐश्वर्य फीका-फीका सा लगता है। अतः हे कविश्रेष्ठ, आप तो मेरे परम हितैषी हैं और हैं सच्चे पुण्य-सहायक। मेरे मन की इच्छाओं को आप ही पूर्ण कर सकते हैं। यही सोचकर अपने हृदय की गांठ आपके सामने खोलता हूँ और विनय करता हूँ कि आप मेरे निमित्त एक ग्रन्थ की रचना कर दीजिए जिससे कि मैं उसका प्रतिदिन स्वाध्याय कर सकूँ।' कमलसिंह की प्रार्थना सुनकर महाकवि रइधू ने उन्हें आश्वासन देते हुए कहा—"विद्वज्जनों का आदर करनेवाले हे भाई, तुम मेरी बात सुनो—कैलाश-सरोवर

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

में भरे हुए विमल जल के सदृश ही तुमने गोपाचल (ग्वालियर) को पवित्र तीर्थ बना दिया है। प्रजाजनों का पालन करने में तुम अत्यन्त प्रवीण हो। शास्त्र-पुराण एवं शस्त्रास्त्रविद्या में भी तुम अत्यन्त कुशल हो, फिर तुम्हारी प्रार्थना की अवहेलना मैं कैसे कर सकता हूँ, इस स्वीकारोक्ति में कवि ने 'सम्मत्तगुणणिहाणकव्व' नामक ग्रन्थ की रचना करके उसे समर्पित किया।

यह 'सम्मत्तगुणणिहाणकव्व' सम्यक्त्व सम्बन्धी अत्यन्त सरस एवं सरल रचना है जिसमें चार सन्धियाँ हैं। यह ग्रन्थ विषय की दृष्टि से तो महत्त्वपूर्ण है ही, गोपाचल एवं मालवा के मध्यकालीन जैन समाज के इतिहास की दृष्टि से भी वह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण रचना है। ग्वालियर-दुर्ग की ५७ फीट ऊँची आदिनाथ की मूर्ति का इतिहास इस ग्रन्थ की प्रशस्ति के बिना स्पष्ट नहीं हो सकता। इसी प्रकार तोमरवंशी राजा डूँगरसिंह के राजनैतिक जीवन पर भी इस प्रशस्ति से सुन्दर प्रकाश पड़ता है। कमलसिंह की प्रेरणा से ग्वालियर-दुर्ग में करोड़ों मुद्राएं व्ययकर लगभग ३३ वर्षों तक लगातार अनेक जैन मूर्तियों का निर्माण कराया था। ५७ फीट ऊँची आदिनाथ की मूर्ति का निर्माण एवं प्रतिष्ठा समारोह कमलसिंह संघवी ने तथा उसकी प्रतिष्टा का कार्य महाकवि रइधू ने ही किया था। इस प्रसंग का बड़ा मार्मिक चित्र उक्त ग्रन्थ की प्रशस्ति में अंकित है।

१६. हरसी साहू—रइधू के एक दूसरे भक्त श्रावक थे—हरसी साहू। उनकी तीव्र इच्छा थी कि उनका नाम चन्द्रविमान में लिखा जाय। अतः उन्होंने कवि से सविनय निवेदन किया—'हे महापण्डित, आप महाकवि हैं। आपने अनेक भक्त-श्रावकों

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

के स्वाध्याय के लिए जिस प्रकार अनेक ग्रन्थों की रचना की है उसी प्रकार कृपा कर मुझे भी 'पद्मचरित' की रचना करके दीजिए। मुझ पर अनुरागी बनकर मेरी प्रार्थना सुन लीजिए और उक्त ग्रन्थ लिखकर मेरा नाम चन्द्रविमान में अंकित करा दीजिए।' अन्त में कवि ने उसके लिए 'पद्मचरित' का प्रणयन किया।

उक्त 'पद्मचरित' अपभ्रंश भाषा में है तथा महाकवि स्वयंभू के 'पउमचरिउ' के बाद दूसरी स्वतंत्र एवं विशाल रचना है। इसका कथानक आचार्य विमलसूरि एवं रविषेण की परम्परा के अन्तर्गत है। इसकी प्रशस्तियों में मध्यकालीन जैन समाज का अच्छा चित्रण है। यह ग्रन्थ भी अभी तक अप्रकाशित है।

१७. **खेऊ साहू**—महाकवि रइधू का एक तीसरा भक्त श्रावक था खेऊ साहू। कहाकवि ने जब उन्हें आदेश दिया कि आपको 'पार्श्वनाथचरित' के लेखनकाल के मध्य उनके परिवार का भरण-पोषण करना है तो खेऊ साहू प्रसन्नता से भर उठे। इसे कवि की कृपा मानकर वे बोले 'हे अखण्ड शीलवाले महाकवि रइधू, आपके आदेश से मेरा मन पुलकित हो उठा है। आप ही बताइये कि यदि घर पर बैठे-बैठे ही कल्पवृक्ष के फल मिल जावें तो उन्हें कौन नहीं खाना चाहेगा? यदि अपने पुण्यप्रताप से कामधेनु घर बैठे ही प्राप्त हो जाय तब फिर धूल उड़ानेवाले हाथी को कौन चाहेगा? आज आपने मुझपर जो कृपा की है उससे मेरा जन्म सफल हो गया है। आप धन्य हैं, जिन्हे कविजनों को दुर्लभ ऐसा उदार हृदय प्राप्त हुआ है।'

जब 'पार्श्वचरित' की रचना समाप्त हुई और कवि ने उसे खेऊ साहू को समर्पित किया तब खेऊ साहू ने केवल हर्ष ही व्यक्त

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

नहीं किया, अपितु उसे देश-विदेश से मंगवाए हुए कीमती हीरे रत्न एवं वस्त्राभूषणों से आभूषित कर उसका सार्वजनिक सम्मान भी किया।

रइधू कृत इस 'पार्श्वचरित' की अनेक हस्तलिखित प्रतियां उपलब्ध हैं किन्तु इसकी एक सर्वश्रेष्ठ एवं ऐतिहासिक प्रति मुझे एक जैन भण्डार में उपलब्ध हुई, जिसकी विशेषता यह है कि वह सचित्र है तथा महाकवि रइधू के जीवन काल की ही प्रतिलिपि है। उसके चित्र मध्यकालीन चित्रकला के सर्वश्रेष्ठ नमूने हैं। इन चित्रों का प्रकाशन अनिवार्य है। अन्यथा कुछ समय के बाद वे निश्चय ही नष्ट हो सकते हैं।

१८. **सेठ कुन्थुदास**—चन्द्रवाडपट्टन के पद्मावती-पुरवाल जाति के शिरोमणि नगरसेठ कुन्थुदास भी कम साहित्यरसिक न थे। रत्नजटित मुकुट एवं अलंकार उन्हें अत्यन्त प्रिय थे किन्तु स्वर्णनिर्मित नहीं ग्रन्थरत्नरूपी अलंकार। श्रावक कुन्थुदास के बार-बार विनय करने पर महाकवि रइधू ने उसके सिर पर समस्त दुःखों के अपहरण करनेवाले 'त्रिषष्टिशलाका महापुरुष पुराण' रूपी मुकुट को बांध दिया। इसी प्रकार उनके बाएँ कान में सुवर्ण सिद्धि सम्यग्दर्शनरूपी रत्न से निबद्ध तथा रवि-मण्डल की प्रभा के समान दीप्त, विस्तृत 'कौमुदी कथा' और दाएँ कान में सोलह-भावना रूपी मणियों से जटित जीमंधर के गुणरूपी स्वर्ण से घटित 'जीमंधरचरित' रूपी अद्वितीय कुण्डल पहिना दिये।

महाकवि रइधू के अद्यावधि उपलब्ध २५ हस्तलिखित ग्रन्थों में से उक्त तीन ग्रन्थ साहू कुन्थुदास के निमित्त ही लिखे गये थे। ये तीनों ग्रन्थ अप्रकाशित हैं। इसमें से 'त्रिषष्टिशलाका महापुरुष पुराण' (अपरनाम महापुराण) को तो कुछ समय पूर्व मुझे

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अनुपलब्ध एवं विनष्ट घोषित कर देना पड़ा था किन्तु संयोग से वाराबंकी के जैन समाज ने उसे सुरक्षित रखा था। पूज्य पं. कैलाशचन्द्र जी (वाराणसी) के सद् प्रयत्नों से वह प्राप्त हुआ। इसमें ५० सन्धियाँ एवं १५१५ कड़वक हैं। दूसरे ग्रन्थ 'कौमुदी-कथा' में सम्यक्त्व का वर्णन तो है ही किन्तु प्रसंगवश कवि ने गुप्तकालीन कौमुदी महोत्सव की झलक भी उसमें प्रस्तुत की है। 'जीमन्धर कथा' में वर्ण्य-विषय के अतिरिक्त मध्यकालीन सांस्कृतिक सामग्री का अपूर्व भण्डार है।

इस प्रकार प्रस्तुत पुस्तिका में ऐतिहासिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण कुछ श्रावक-श्राविकाओं की संक्षिप्त चर्चा की गई है--किन्तु इस विषय का यह अन्त नहीं है, बल्कि यह तो एक अति संक्षिप्त प्रारम्भिक उदाहरण मात्र ही है। वस्तुतः हमारी शिलालेखीय एवं प्रशस्ति-मूलक सामग्री समय-समय पर किन्हीं अज्ञात कारणों से नष्ट होते रहने पर भी इस समय जितनी उपलब्ध है उसके शतांश का भी अभी तक लेखाजोखा नहीं हो पाया है। जैनविद्या अभी तक उपेक्षित ही है। जैन-शिलालेख एवं जैन-ग्रन्थ प्रशस्तियाँ जैन-इतिहास की दृष्टि से तो महत्त्वपूर्ण हैं ही किन्तु भारतीय इतिहास, विशेष रूप से सामाजिक इतिहास के कुछ अस्पष्ट तथ्यों को प्रकाशित करने तथा विशृंखलित अथवा टूटी हुई कड़ियों को जोड़ने में भी उनका विशिष्ट योगदान हो सकता है। अतः उन्हें राष्ट्रीय-गौरव-निधि मानकर उनका सर्वेक्षण, संकलन, संरक्षण, सर्वांगीण-निष्पक्ष-समीक्षात्मक एवं तुलनात्मक अध्ययन तथा विधिवत् प्रकाशन नितान्त आवश्यक है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स्रोत-सामग्री

प्रकाशित—आदिपुराण, जिनसेन
उत्तरपुराण, गुणभद्र
कथाकोष प्रकरण, जिनेश्वर सूरि
कुमारपाल प्रतिबोध, सोमप्रभ
ग्वालियर राज्य के अभिलेख, द्विवेदी
जसहरचरिउ, पुष्पदन्त
जैन शिलालेख संग्रह (माणिकचन्द सीरीज), भाग १-३
णायकुमारचरिउ, पुष्पदन्त
तिसट्ठिमहापुरिसगुणालंकारु, पुष्पदन्त
पउमचरिउ, स्वयंभू
पुरातनप्रबन्धसंग्रह, सिंघी सीरिज
प्रबन्धचिन्तामणि, सिंघी सीरीज
हरिवंशपुराण, जिनसेन
कीर्तिस्तम्भ, द्विवेदी
जैन साहित्य और इतिहास, नाथूराम प्रेमी
प्राचीन भारत, मेहता

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भारतीय संस्कृति के विकास में जैनधर्म का योगदान
जैनविद्या, जैनविद्या संस्थान द्वारा प्रकाशित स्वयंभू एवं
पुष्पदन्त विशेषांक
मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, ओझा

अप्रकाशित —पउमचरिउ, रइधू
पासणाहचरिउ, विबुधश्रीधर
सम्मइजिणचरिउ, रइधू
सम्मत्तगुणणिहाणकव्व, रइधू
सावयचरिउ (कौमुदी कथा), रइधू

5263

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सर्वोदयतीर्थमिदं तवैव

—आचार्य समन्तभद्र

हे भगवान् ! आपका तीर्थ ही सर्वोदय/सबका उत्थान करनेवाला है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi